दो शब्द

अलग अलग रचनाओं मे शुरू होकर अलग अलग राहों को नापती हुई हमारी काव्य-यात्रा इस चौराहे पर आकर अब साथ हुई है। साथ हम पहले नहीं थे। समान स्थितियो को भी हमने जिया नहीं है—और न आज भी जी रहे हैं। हमारे संघर्षों के मैदान भी अक्सर तो अलग-अलग ही रहे हैं। विभिन्न दिशाओं से आकर, अपने-अपने अनुभवों के साथ इस चौराहे पर हम मिले हैं। और साथ हुये हैं तो यह मात्र किसी आकस्मिक संयोग का परिणाम नहीं है। अनेक असमानताओं के बावजूद हमारी कुछ समानतायें भी हैं जो हमारे साथ होने का आधार बनी है।

चौराहा जिसे कहा जाता है, ऐसा यहाँ कुछ भी नहीं है। चार तो दूर, यहा तो एक भी स्पष्ट राह नजर नही आती है। यहा चारो ओर कदम-कदम पर नागफणी-कैक्टस की तरह अनगिनत प्रश्न खड़े हुये हैं, जिनके पार न तो साफ कुछ नजर ही आता है और न उन्हे साफ किये बिना कदम ही आगे बढ़ाना मुमकिन है। प्रश्नों की हर नागफणी-कैक्टस झाड़ी के चारों ओर अंकित आने और जाने वालो के अनेक पदचिन्ह साफ कहते हैं कि बनी हुई राहों से हटकर इनको साफ करने मे कितने ही हमारे हमसफर और भी हैं। इसलिए हम हारे नहीं हैं।

एक राह हो तो चलते रहना संभव हो सकता है, पर चौराहे पर आकर तो राह का चयन करने के लिए ठहरना ही पड़ता है। और फिर ऐसे मुकाम पर, जहा राह जैसा स्पष्ट कुछ भी न हो, रुक कर अपनी राह का चयन किए बिना चलने का कोई अर्थ नहीं होता। चलना तो एक ही राह पर ही हो सकता है। 'सभी रास्ते आगे तक जाते हैं'—ऐसा हम नही मानते। साइन बोर्ड्स की सत्यता पर अब शायद ही किसी को यकीन रह गया है। इसलिए हर चौराहे पर एक ठहराव आता है और हर ठहराव पर अक्सर एक नये रास्ते का साइनबोर्ड होता है।

हमें लगता है—हम ही नहीं, इस दौर मे आकर सभी ठहरे हुए हैं। वे भी, जिनके बारे में अब तक यह सुनते आ रहे थे कि उन्होंने आगे की राह का संधान कर लिया है और अब निरन्तर तेजी से उस पर बढ़े चल रहे हैं, अब

चारों ओर राहों के साथ लिपटे बेशुमार नागफणियाँ सभी प्रश्नों के नागफणी–कैक्टस आदियों से अवरुद्ध रहते हुए इस दौर को चौराहा नहीं है और क्या कहें ?

हम जानते हैं कि हर प्रश्न अपने भीतर अपना समाधान लिये होता है। हर नागफणी–कैक्टस की ओट में आगे की राह छिपी हुई है। हम यह भी जानते हैं कि हर समाधान एक और नये प्रश्न को जन्म देता है हर राह एक और नागफणी में जाकर खोती है। प्रश्न फिर उत्तर मांगता है—नागफणी फिर पार करना आवश्यक हो जाता है।

यह भी हमें मालूम है कि आखिर प्रश्न-दर-प्रश्न चलता हुआ समाधान फिर उसी मूल प्रश्न पर पहुंचा देता है, जहां से आगे बढ़ा गया था। नागफणी-दर–नागफणी गुजरती हुई राह फिर उसी जगह ले आती है, जहां से यात्रा शुरू की गई थी।

पर हम यह भी समझते हैं, कि ऐसे प्रश्न और समाधान—ऐसी नागफणियां और राहें हैं ही इसलिए कि कोल्हू का बैल निरन्तर चलता तो रहे पर तनिक भी आगे नहीं बढ़े। और तेल निकलता रहे। ये प्रश्न और उनके समाधान—ये नागफणी झाड़ियां और उनसे निकली राहें हैं नहीं, रची गई हैं स्वाभाविक नहीं हैं, आरोपित हैं। वास्तविक नहीं हैं, छलावा हैं। अन्तहीन चक्र है यह राह, नहीं। जो आगे नहीं ले जाय, वह राह नहीं होती।

हम मानते हैं कि राह भी अन्तहीन होती है। पर वह भविष्य की ओर बढ़ती है, अतीत की ओर नहीं मुड़ती।

इस अन्तहीन राह को अवरुद्ध करने वाले, स्वाभाविक और आरोपित दोनों ही प्रकार के अवरोधों को साफ करने के यज्ञ में हमने भी निष्ठा पूर्वक कुछ होम किया है। 'चौराहे से आगे' में उसी की चन्द प्रतिनिधि रचनायें हैं। बस, सिवा इसके, अन्य किसी प्रकार का दावा हम नहीं करते।

—भागीरथ 'भाग्य'
—रामस्वरूप 'परेश'
—मदन भारतिक
—राम अवतार

झुंझुनू
15 दिसम्बर, 1982

चौराहे से आगे

- भागीरथ 'भाग्य'
- रामस्वरूप 'परेश'
- मदन यात्रिक
- राम अवतार

प्रकाशक :
प्रहरी प्रकाशन
झुंझुनू (राजस्थान)

मुद्रक :
अनुपम प्रिन्टर्स, झुंझुनू
शकुन प्रिन्टर्स, जयपुर

आवरण .
विनोद भारद्वाज

दिसम्बर 1982

मूल्य– बत्तीस रुपये

अनुक्रमणिका

गौरव 'भाग्य'

मस्वरूप 'परेश'

मदनाञ्जलि

राम अवतार

— भागीरथसिंह 'भाग्य'

शकुन–गीत

आज पानी का घड़ा फूटा, कहीं बरसात होगी
बोलता चातक नहीं झूठा, कहीं बरसात होगी

घाट पर नावों का डेरा
हो गया दिन में अंधेरा
देख खाली टोकरी को
रो पड़ा बूढ़ा मछेरा
जाल मछुआरों का फिर टूटा, कहीं बरसात होगी
बोलता चातक नहीं झूठा, कहीं बरसात होगी

आज का मौसम हठीला
कर गया आटे को गीला
कोसता है भाग अपना
भूख से पीड़ित कबीला
काम बेजारों का फिर छूटा, कहीं बरसात होगी
बोलता चातक नहीं झूठा, कहीं बरसात होगी

घुल गया फागुन कहीं से
उड़ गया आंचल कहीं से
बेलिया की आग में अब
छा गया बादल कहीं से
भावना का बांध फिर टूटा, कहीं बरसात होगी
बोलता चातक नहीं झूठा, कहीं बरसात होगी

ये निगोड़ी आस्थाएं
किस तरह धूनी रमाएं
क्या हुआ जो इस मरुस्थल में
नहीं जलती चिताएं
डाकुओं ने गांव फिर लूटा, कहीं बरसात होगी
बोलता चातक नहीं झूठा, कहीं बरसात होगी

—०—

जिस दिन बादल घर पर होंगे
खेत महाजन के घर होंगे
बस तेरा घर बार बचाने
घर वाले सब बेघर होंगे
कौन जनम के भोग रहा है कुटम कबीला बार रे
आधी रात सुनी है उसने बेटा की पदचाप रे

जितना सूना पन जीवन मे
उतना ही कोलाहल मन में
थककर पगड़ी रास हुई है
आशाओं के होम हवन में
व्याकुल अंतर मे उग आये मन बोये संताप रे
आधी रात सुनी है उसने बेटों की पदचाप रे

—o—

छप्पर से झर झर झर
झरता है पानी
पलकें भी भरती हैं
झोंपड़ी पुरानी
भीगे से कपड़ों पर गर्द सी हवा रे
सावन में उतर गयी घाव से दवा रे

भीगी हर बस्ती में
भीगा हर आंगन
भीगी सी आंखों में
डूब गया जीवन
पुरवा ने बार बार दर्द को छुआ रे
सावन में उतर गयी घाव से दवा रे

—o—

पति चित्रकूट में फिट फिट कर ऊब गई थी सुरसतिया
इसीलिए परसों पोखर में डूब गई थी सुरसतिया

राम कसम हमने नहीं देखा, लेकिन परमा कहता है
'फैशन बाबू' की बनकर महबूब गई थी सुरसतिया

बांझ रह गई थी बेचारी इसीलिए तो रातों दिन
औघड़ बाबा की सेवा में खूब गई थी सुरसतिया

थानेदार बड़े मनमौजी बगिया रखते थाने में
थाने के पिछवाड़े बोने दूब गई थी सुरसतिया

जितने मुंह उतनी ही बातें किस की सच्ची मानोगे
हम तो इतना जानें भैया टूट गई थी सुरसतिया

—o—

याद हुयी सयानी पल निकल आये
आज नहीं पर आयी शायद कल आये

सूखे दरख़्त सा अपना
जीवन मधु
उजड़े और बरबाद शहर
सा, मन बंधु
अब उजड़ी डाल पात नव पम आये
आज नहीं पर आयी शायद कल आये

याद हुयी सयानी पल निकल आये
आज नहीं पर आयी शायद कल आ[illegible]

मुझे दरगत का मरना
जीवन मधु
उजड़े और बरबाद शहर
का, मन मधु
जब उजरी रात आय तब पल आ
आज नहीं पर आयी शायद कल आ

कई दिनों से यहाँ ज़िन्दगी नहीं आई
हमें तो ऐसा लगे है कहीं नहीं आई

ये साथ बोझ बनेगी
यहीं पे छोड़ चलो
ये द्वार बन्द रहेगा
इसे भी तोड़ चलो
जिसे तलाश रहे वो कभी नहीं आई
हमें तो ऐसा लगे है कहीं नहीं आई

हम ही थे नादान
उजाड़ा घर बंधु
अपने पैरों बांध
लिये पत्थर बंधु
उगने चले मगर गीतों में ढल आये
आज नहीं घर आयी शायद कल आये

खलता है अपनों का
अपना पन बंधु
मन को अच्छे लगते हैं
दुश्मन बंधु
जिनसे था कुछ प्यार उन्हीं को छल आये
आज नहीं घर आयी शायद कल आये

—o—

कई दिनों से यहाँ ज़िन्दगी नहीं पाई
हमें तो ऐसा लगे है कहीं नहीं पाई

ये शाम बोझ बनेगी
यहीं पे छोड़ चलो
ये द्वार बन्द रहेगा
इसे भी तोड़ चलो
जिसे तलाश रहे वो कभी नहीं पाई
हमें तो ऐसा लगे है कहीं नहीं पाई

ये कौनसा है नगर
लोग खास रहते हैं
है साथ सबका मगर
सब उदास रहते हैं
कि इस सदी में यहा पर हमो नही आई
हमें तो ऐसा लगे है कही नहीं आई

बुझा दिये जो दिये
हाथ जल गया यारो
बहुत करीब से कोई
निकल गया यारो
यहा पे लौट के फिर रोशनी नही आई
हमे तो ऐसा लगे है कही नही आई

—०—

बापू ने सरसों बोयी थी आग लगी है खेतों में
दादा के बूढ़े बैलों की आग लगी है खेतों में

अब की बार 'भुवा' भी शायद पटवारिन हो जायेगी
पिछले दिनों प्रेम की बातें खास लगी हैं खेतो में

दो बीघा में धान देख होरी पर जोबन छाया है
पर की रूठी धनिया कितनी पास लगी है खेतो में

कौन पूछता है ये मौसम जीती है या मरती है
पर चौमासे बूढ़ी काकी आस लगी है खेतो में

आँखों से मुँह में घुटनों में बस पानी ही पानी है
हम भी पानी पानी फिर क्यों प्यास लगी है खेतों में

—•—

गज़ल

इस गली से गुन गुनाकर जब गुज़र जाऊगा मैं
एक चेहरे की तरह धड से उतर जाऊगा मैं

ये तेरी रुस्वाइयाँ गर इस तरह बढती रही
हो न हो इक दिन तेरे साये से डर जाऊगा मैं

और कुछ धोखा नही, धोखा है बस इस बात का
बात दिल की दिल मे लेकर यार घर जाऊगा मैं

एक पल तू प्यार से बोले, तो बाकी जिन्दगी
शर्तिया कहता हू तेरे नाम कर जाऊगा मैं

[illegible]
मैं

यार जब भी इधर से आता है
राम जाने किधर से आता है

जब भी टूटा, पता लगे तुमको
मैं समझा कि घर से आता है

मेरा गाँव देखता है अचरज से
जब भी कोई शहर से आता है

मंदिरों से किसी को प्यार नहीं
जो भी आता है डर से आता है

एक जोगी है जो कि अपना है
और वो साल भर से आता है

जो भी पहुंचा है तेरी मसजिदों तक
सब के सबकी नजर से आता है

—•—

ये जो तस्वीर पे निशानी है
एक लड़की की मेहरबानी है

चन्द ग़ज़लें, किताब कुछ नज़्में
एक शायर की ज़िन्दगानी है

पीढ़ी दर पीढ़ी चलती आती है
परम्परा नहीं, मेहरबानी है

कौन रखे तेरे सदमों का हिसाब
अपना खाता यही जुबानी है

उसके आगे न दिल की बात करो
उसकी आँखों में अब भी पानी है

—०—

हड्डी नहीं, चमड़ी नहीं, कांटे सा बदन है
जाने किस ठौर पे भटका हुआ मन है

लगता है मेरे हाथ हैं, हाथों में है मुट्ठी
मुट्ठी में ख़यालों का बधा नील गगन है

कुछ देखा यहां हमने तो, बस इतना ही देखा
आंसू वही, चश्मा वही, भीगे से नयन हैं

फिर वही शाम, वो महफ़िल, वो छलकते प्याले
क्यों मेरे लब पे मगर मीरा का भजन है

हर शख़्स के चेहरे पे नज़र आता है [illegible]
मे गदी चीज कि सिर्फ़ महाजन की लगन है

—•—

कोर्स की किताब सा
मनचाहे उलट पलट
टाल दिया दिन
मुंह फट सूरज ने दे दिया जवाब
नंगे अंधेरे की पीठ पर
कुहनियों के बल सरकती
एक परिचित गंध

मन की मेज पर
रात कई खोल कर
सुधि के गुम नाम—

तब लगा कि—
प्रश्न मेरा
आलपिन के नुकीले सिरे से
गत युगों से बहुत तीखा है
बहुत तीखा है।

तारों के चेहरों पर मलकर भी
बच गई
ढेर सारी
मुट्ठी भर
रात की गुलाल

प्रताप के
आस्था हीन खुरदरे रेलिंग पर
उम्र की नंगी कुहनियां
होगई बदनाम

[इन्दौर]

गारे ग्राकाग
भरी हुई महा
मेरे ही कंधो
ग्रौर ग्रधिक ल
मूलो पर ग्रट

ग्रपने ही सीने की ग्रनबोली
ग्रर्थ भरी धड़कन के कह कहे
भीड़ भरी बस्ती की
छिली हुई
ग्रावाजें पी गये

जुड़ने के यत्नों पर
चिन्तन को टांगते
ग्रौर ग्रधिक टूट ग

क्वांरी ग्रनुभूति के
मक्खी से परों से
बहुत छोटा हो गया
ग्रभिव्यक्ति का ग्राकाश

पंजे पर खड़े हुये
प्रश्नो की कौड़ी सी
बिंधा हुग्रा
ग्रंधी ग्रावाजों मे ग्रप
पत्थर का बुत

तब लगा कि
प्रश्न मेरा

एक

दर्द की दूकान पर बिकते रहे हम लोग।
सत्य के संदर्भ से बचते रहे हम लोग।

यह असंगति बहुत दुखदायी ही रही
इतिहास के भूगोल मे छपते रहे हम लोग

स्वाद मीठा है बहुत तासीर है कड़वी
जानकर भी प्यार को चखते रहे हम लोग।

दोस्तों के लान मे क्यों फूल खिल जाये
इस जलन से उम्र भर तपते रहे हम लोग।

लक्ष्य के पथ मे भटकते अब तलक
मुकाम के संपर्क से बचते रहे हम लोग।

इसलिए बिगड़ी है कुछ ईमान की सेहत
चैन को बाज़ार पर धरते रहे हम लोग।

[[illegible]]

दो

धूल सा बिखर गया है मन।
धुएं सा बिखर गया है मन।
चांदनी सौंप बिखर कर सांसों
आके दिन कहीं न भर गया है मन।
याद चढ़ पायी है ओसार
सिरहाने उतर गया है मन।
रंग और गंध की भीड़ में
किसी गुम बिखर गया है मन।
कभी कोई मर गया था मन में
अब किसी में भर गया है मन
खुशी के क्षण सामने हुये
झाड़ियों से घिर गया है मन

× × ×

तीन

रोज ही जीता रहा मरता रहा हूं मैं।
उस का दामन रफ़ू करता रहा हूं मैं।

हर खुशी अपनी कि हर जगह गमना
जिन्दगी के कर्ज में मरता रहा हूं मैं।

गंध देकर गर्द ही पायी जमाने में
वक्त को सब गुरु नजर करता रहा हूं मैं।

पर्वतों के सामने निर्भय खड़ा होकर
आंधियों से संधियां करता रहा हूं मैं।

क्या सुनाऊं मैं तुम्हें गन्तव्य की बातें
रास्तों में ही सफर करता रहा हूं मैं।

अब तो तुम भी दाव पर धरने लगे मुझको
दोस्तों से इसलिए डरता रहा हूं मैं।

—o—

मैं देखता
इन फुनगियों पर रोज
क्षण भर नाचते हैं पर
उजाले के कबूतर
और अंधेरे के परिवेश में
खो जाता है उदास शहर

तब कई निर्वासित स्मृतियां
खटखटाती हैं हृदय की अर्गलाएं
फिर समय की पर्त में कुछ ढूंढता है मन
एक साथ कई प्रश्न
अनबोये अनबुवाते

अपनी खाली जेबों के लिए
जितना उदास है हृदय
बस कुछ नहीं है शेष
भीतर की समग्रता के खण्डित होने का क्रम जारी है
और मैं
समय की गलगली पर
पीढ़ियों से टंगा एक रद्दी कोट

बाहर से आदमी-सा
भीतर से वन मानुष
सपनों के आंगन में नागफनी बोयी है
और पाया है बदले में
एक भूखा दिन
और एक नंगी रात

[[illegible]]

यहां से रोशनी की बातें मगर यह
अट्टहासी अंधेरे
यहीं से शुरू होता है मेरे कदमों का सिलसिला
यह कोई नयापन नहीं है
समय ने एक ही पृष्ठ रटाया है रोज
और उसी पर सेकता है दर्द
मानो पसलियां

मेरी पहचान खो गई है यहां
और मैं अधूरे सपनों की नुमाइश में
दर्शक की तरह घूम रहा हूं

संघर्ष को कई मत मिले
चुनौती के, गर्व के, सुभाव के
किन्तु मैं देवत्व पाने के लिए
सहता रहा टांकियों की चोट
इस पर भी जमाने की हिदायत—
'बहुत कड़वी है शराब, पानी मिला के पी'

बहुत चाहा कि
पड़े रहे जेबों में खोटे सिक्कों से
कई दूधिया प्रहर
पर समय के जहर के बदले
सभी देने पड़े
और तब कुछ छंद
कड़वाहट हृदय में घोल कर उभरे
यह परीक्षा कलम की कितनी बड़ी थी
और तब जाना कि
आदमी का दंश
खूनी जानवर से भी विषैला है
आदमी हर समय
निचले धरातल से गुजरता है
पुतलियों के भाव कब पढ़ सका है
गीता पढ़ता है । गाली देता है
असंगतियां जीता है । विकृतियां ढोता है

आइना से उठाकर
बासी सूनेपन में घिरे उदास मन पर
सतरंगी इन्द्र धनुष
निर्वासन बदल सकते थे
राज्याभिषेक में
और जड़ सकते थे आजीवन के चौखटों में
गंध भरे खुशियों के चित्र

किन्तु मैं बंद कर दिया गया हूं
एक होटल के बदनाम कमरे में
और कई बार चलाया गया हूं
अंधेरे के धनुष पर रख कर रोशनी के विरुद्ध
इस इनायत के लिए
किसको दूं बधाई के पत्र

रावण का पक्ष लेकर राम से जूझा हूं
कई बार समय की हाट में बिक्री के लिए रखा गया हूं
और हद के मैदान से गुजरी है
मेरी नैतिकता और आदमीयत

फिर भी जब देखता हूं
पश्चिम के धुंधलाते मेज पोश
पुरवाई उठा उठा पर्दे को
झांक झांक जाती है भीतर

रातों के उजाले में
प्राणों की चोलों पर रेखा सी सुधियां
रोज काढ़ती हैं दर्द के कशीदे
मगन भरे प्रहर कई-मादक सी सौरभ
अर्थ भरे कई पल
थपथेमी थरथर

[हेडीज]

लावारिश सड़कों पर मुड़ा गई चाल
जेबों मे सूख रहे गदे रूमाल

सांसों की मेजों पर सुधियों के ढेर
कुंठित मस्तिष्कों मे वाणी म घेर
कुंडलियां मार रहे गूंथ रहे जाल
बस के हत्थे पर धरे धरे भाल
जेबों में सूख रहे गदे रूमाल

बस्ती को घेरे है अजगर की बांह
रेशमी खजूरों की चुभन भरी छांह
छिपकलियां निगल रहीं ज्योति के पतग
इस कारण पहनी है अजगर की खाल
जेबों मे सूख रहे गदे रूमाल।

सुधियो के सर्पों के दंश पैनियाए
गुनगुनी सांसो के बोल पुनः पथराए
हंसने की आदत जो लाती भूचाल
जेबों मे सूख रहे गंदे रूमाल

कोई सा तैर रहा शब्दों में अपनापन
टूट गया गरती सी धूही सा मन
सिकुड़ी सीमाओं के पहन नये कोट
धोते संबंधों के रफू किये शाल
जेबों में सूख रहे गदे रूमाल

—•—

[देहीब]

पांव सदा बचकर चलते हैं शूलों के चौराहों से
पर मन का तट ठगा गया है लहरों के भुज बंधन से।

नयन नयन में सपने बोये
अधर अधर को गान दिया।
मधु बरसाकर पाषाणों पर
शाप लिया वरदान दिया।

यों तो सुमन भरे उपवन से सौरभ के बाजार सजे
पर मन का पंछि बंध न सका है कनक कला कंचन से।

झूठे सब आश्वासन पाये
विश्वासों ने छला मुझे।
सुधियों के निर्मम हाथों से
आशाओं के दीप बुझे।

आकृतियों की भीड़ लगी है जीवन की मधुशाला में
कौन बिम्ब जो व्यथा पूछता है दुखियारे दर्पण से।

सूखी वंदनवार समय की
हर परिचय कब प्रीत बना
शूल चुभाती पीड़ाएं पर
हर आंसू कब गीत बना

रंगों की गलियों में फिरते वय का यौवन बीता लेकिन
सपनों की देहरी पर धर कर किसने दीप जलाया मन से।

पांव सदा बच कर चलते हैं शूलों के चौराहे से
पर मन का तट ठगा गया है लहरों के भुज बंधन से।

ह देने से मन की बात परायी हो जाती है।
अन्तर की हर आह दवाई हो जाती है।
ताजा दर्द हिला देता पर्वत को लेकिन
अगर पुरानी हो तो पीर दवाई हो जाती है।

•

लगते अलाव का आभास सा तो हो।
टूटते किनारों का एहसास सा तो हो।
कैसे समझें कि ये हालात बदल जायेंगे
कुछ न सही दर्दनाक हादसा तो हो।

•

तझड़ की कहानी को बहार क्या जाने
यौवन की रवानी को मजार क्या जाने
भार डोली का पूछो तो बता देंगे मगर
दुल्हन की जवानी को कहार क्या जाने

•

जहां अंधेरा है वह सवेरा तो नहीं है।
मकतल है जहां गौतम का बसेरा तो नहीं है।
आदमी का खून पसीने से सस्ता बेचने वालो
सपना है फरेबों से भरा देश मेरा तो नहीं है।

[मनोज]

जिन्दगी के होठों पे मातम की सरगम है ।
सावन ममगी है फागुन की आंख नम है ।
सुना है बहुत छोटी है राहे हयात मगर
चैन से कट जाये तो इतनी भी क्या कम है।

•

हर गीत को पाव सोना नही आता है ।
हर उम्र को जहर पीना नही आता है ।
जिन्दगी बहुत सीधा सा फन है मगर-
हर आदमी को जीना नही आता है ।

•

प्यार के गुलशन में गोगवार हैं हम ।
दर्द के सौदे के खरीददार हैं हम ।
इसलिए काटते हैं जिन्दगी की सजा
वक्त के सबसे बड़े गुनहगार हैं हम ।

•

हर कंधे पर भार नहीं होता है ।
हर तिनका पतवार नहीं होता है ।
नियति को क्यों कोस रहा है पगले
हर सपना साकार नहीं होता है ।

•

सीपी प्यालों को सुराही से वुजू करता हूँ ।
शामो सहर बेदमी से गुफ्तगू करता हूँ ।
तुम समझते हो मैं जीता हूँ, हर कदम
उम्र की दुल्हन के दामन को रफ़ू करता हूँ ।

-

उदास फूलों के होंठों पर
जमी हुई आहें
और—
नदी के हाशियों पर नाचते
पहाड़ों के कहकहों को
इस माहौल में
क्या नाम दूं ?

मैं इतिहास के
खून से रंगे हुये पिछले पृष्ठों में
प्रश्नवाची युग सत्य के लिए
नये सन्दर्भ में
शीर्षक ढूंढता हूं

परतों की पसलियां बेधते
टूट टूट कर कुहनियो के बल
रेंगती रोशनी
लोकतत्र की अगुलिया तराशती
खून से रगी पैशाची हथेलियां
आदमीयत को दराज मे बद कर
आदमी के चोखटे मे
फिट कहलाने वालों को
किस प्रतीक से व्यक्त करूं ?

शायद राजनीति और मानवता के
अर्थ बदल गये हैं
समय की सीढ़ियों पर बिखरे
कालिख और कांच के टुकड़ो के लिए
शब्द बहुत छोटे हैं
इन तीखे प्रश्नो के लिए
कौन से शब्द खोजूं ?

सोचता हूं
परिस्थितियों की कड़वाहट को
निगलने से पहले
समय की नीची ऊचाइयां
और ऊची गहराइयो को
क्या सम्बोधन दू ?

—•—

अपने को अपने से निकाल के देख।
हर सांस को मौत पे उछाल के देख।
हर दिल पे तुम सी ही गुजरती है दोस्त !
हर बात को अपने पे ढाल के देख।

•

बेकसी का परिचय किनारे से पूछ।
दूरियों की कहानी सितारे से पूछ।
गीता औ कुरान में खोजना बेकार है दोस्त !
जिन्दगी क्या है यह गम के मारे से पूछ।

•

बाती की बाहों से परवाने को दूर न कर।
आदमी आदमी न रहे ऐसा मगरूर न कर।
तूफां से बचाये तो तेरी मर्जी है लेकिन
आदमी को आइने की तरह मजबूर न कर।

—•—

थी कभी इतनी सुहानी शाम अपनी भी।
बिक गई खुशियाँ सभी बेदाम अपनी भी।
एक पल को झाँकते मुड़कर समझता मैं-
जिंदगी कुछ आ गई है काम अपनी भी।

•

बिजलियाँ बेताब हैं आशियाँ को जलाने को।
टूटे हुए दिल के लिए आँसू हैं सजाने को।
जाम खाली हैं, दोस्त पराये हैं तो शायद
अब न जरूरत है कोई मेरी जमाने को।

•

वह चमन ही क्या जिसका अगर मधुमास बिक जाये।
धरा को कौन पूछे गर कभी आकाश बिक जाये।
रोटी के तराजू पर ईमान तोलने वालो!
वह आदमी क्या जिसका अगर विश्वास बिक जाये।

•

नियति ने बाँध दिये मानव के हाथ।
होती है प्रीत बिना जिन्दगी अनाथ।
तट पर आकर भी बह जाते हैं वे—
समय नहीं देता है जिनको साथ।

—o—

ों से छला गया सपनों का मन ।
ों मे कसक रहे नागफनी क्षण ।।

तन पर भी सीमा है मन पर परिवेश ।
अपना ही घर है पर लगता परदेश ।
अपना मन है जैसे पानी पर चिकनाई ।
सुख जैसे गागर में चेहरे की झाईं ।

आकृतियां सोख रही दर्पण के प्रण ।
प्राणों मे कसक रहे नागफनी क्षण ।।

कहने को जीवन है कितना अभिराम।
सीता ना मिल पायी खोज थका राम।
केवल बस मावस पर अपना अधिकार।
पूनम तो महलों में करती अभिसार।

डसने के आतुर है सुधियों के फन।
प्राणों मे कसक रहे नागफनी क्षण ॥

नैतिकता आज हुई पुस्तक मे बंद।
सच्चाई सीती है अपने पैबद।
है युग के हाथों मे स्वार्थ की ढाल।
खादी के कुर्ते मे रेशमी रूमाल।

अर्थ स्वयं भोग रहे शब्दों का तन।
प्राणो मे कसक रहे नागफनी क्षण ॥

मूल्यों ने बदले हैं अपने परिधान।
कुण्ठाएं घेर खड़ी मन का दालान।
गिरे कई आशा के कागजी चमन।
धाम्याएं करती हैं देव का गबन।

प्रीत यहां देती है मखमली चुभन।
प्राणों में कसक रहे नागफनी क्षण ॥

—•—

अनुभूति निगल रही प्रीत का जहर ।
कुण्ठाएं घेर खड़ी गीत का शहर ।

शीतापन झांक रहा भावों की गहराई ।
सपनों को डसती है शापों की परछाई ।
लिखकर अंधियारे पर सूने की एक ग़ज़ल ।
माना कि है युग को दे डाला ताज महल ।

आओ यह मरम की लहर ।

अपने मे डूब डूब सूने से बतियाते।
गुजरी हैं शाम कई अपने को दुहराते।
भीतर कुछ तोड़ रहा सदियों से तूफान।
बाहर से लड़ना तो है फिर भी आसान।

पर मन को समझाना शूल का सफर।
कुण्ठाएं घेर खड़ी गीत का शहर।।

कुर्सी पर चढ़ते ही फिसल गयी आस्थाएं।
चलती कब आज यहां ईमानी मुद्राएं।
विषवायी आशा का सपनों को विश्वास।
मेरी छाया मुझसे ही खेल रही ताश।

कैसे हो बिम्बो पर दर्पणी असर।
कुण्ठाए घेर खड़ी गीत का शहर॥

वन मानुष ओढ़ रहे खादी की टोपियां।
चांदी से तोल रहो गिरधर को गोपिया।
रिता रहो उम्र यहां गिन गिन कर क्षण।
घटी कहां भीतर की विष बुझी घुटन।

ठहरे कब जेबो में दूधिया पहर।
कुण्ठाएं घेर खड़ी गीत का शहर।।

इस शहर का कैसा रिवाज है
यहां हर आदमी
एक खास सन्दर्भ के लिए
एक खास चेहरा
अपनी जेब मे रखता है
हर आदमी
इस चेहरे से पहचाना जाता है

समझदार वही है
जो जितने ज्यादा चेहरे बदलता है
चेहरों की उतनी ही किस्म है
जितने सन्दर्भ हैं
एक दफ्तर के लिए
एक सड़क पर जीने के लिए
भीड में भीड़ सा लगने के लिए
एक अपनो को छलने के लिए

छिपकलियों को डराने के लिए
एक अजगरी चेहरा है
मन्दिर का भक्त चेहरा है
और होटल के लिए सभ्य चेहरा
एक बीवी के सामने पहने का है
और यहां तक कि एक
अपने आप को छलने के लिए
आइनों से गुजरते वक्त के लिए
बहुत खास चेहरा है

अपरिचित चेहरों की मुस्कान में
मैंने जानना चाहा
अपने असली चेहरे का भार
असली चेहरा—
भीड़ से गुजरा, चौराहे, दफ्तर, बस
मन्दिर और रेस्तरां होता हुआ
शाम को घर लौटा
उदास और अपमानित होकर
खरोंचों से भरा हुआ
फटा, टूटा कालिख से पुता

उस दिन के बाद
इस शहर के रिवाज के अनुसार
पैंट की तरह
कभी चेहरा पहनना नहीं भूला
क्योंकि यहां कोई
असली चेहरे से नहीं पहचाना जाता
सभी की पहचान ये नकली चेहरे हैं

इस शहर का कैसा रिवाज है
यहां हर आदमी
एक खास संदर्भ के लिए
एक खास चेहरा
अपनी जेब में रखता है
हर आदमी
इस चेहरे से पहचाना जाता है

मदन याज्ञिक

जिज्ञासा ने परिचय पूछा— बोला मैं हूं काल
तुमने ही मेरे ललाट पर चिपकाए हैं बाल.

क्षण क्षण में खंडित कर मुझको काल जयी बनते हो
क्षण भोगी, क्षण भीरु, जिन्दगी क्षण भंगुर कहते हो.

मैं अखंड हूं अविरल मेरी धारा बहती रहती
तेरे तन से मुक्त वास्तविक सत्ता मेरी रहती.

बालवर्ष की संज्ञा देकर बालबुद्धि दिखलाते
और खिलौने अल्प बुद्धि के दिखा दिखा बहकाते

कभी बनाकर महिला मुझको सहानुभूति दरसाते
निर्वसना करते जाते हो दुःशासन लज्जाते

मुझे बना विकलांग मकर के आंसू ढरकाते हो
आत्मछली हो, खुद टूटे हो, मुझको खिसकाते हो.

बाल बुद्धि, नारी - दुर्बलता, *भग्न मनुज को जानो*
पहचानो खुद को पहले तुम, फिर मुझको पहचानो.

यह अपूर्व उपहार तुम्हे अब मैं देकर जाता हूं
मैं अविरामी समय, नहीं जाकर के फिर आता हूं.

—०—

जिसका मैं परिचय पूछा— बोला मैं हूं काल
तुमने ही मेरे ऊपर यह अधिकार है बांध.

राज काज में लीन कर मुझको काम नहीं करने दो
राज भोगी, राज भीरु, जिनको राज मधुर कहते हो

मैं समय हू परिवर्तन मेरी धारा बहती रहती
तेरे तन से पृथक वास्तविक सत्ता मेरी रहती.

बालवर्ष की सज्ञा देकर बालबुद्धि दिखलाते
और जिन्होंने अल्प बुद्धि के दिवस दिवस बहलाते.

कभी बनाकर महिला मुझको सहानुभूति दरसाते
निर्बलता करते जाते हो दु शासन सरसाते

मुझे बना विकराल मकर के आंसू ढरकाते हो
अरमदसी हो, खुद टूटे हो, मुझको खिसकाते हो.

बाल बुद्धि, नारी - दुर्बलता, भग्न मनुज को जानो
पहचानो खुद को पहले तुम, फिर मुझको पहचानो.

यह अपूर्व उपहार तुम्हें अब मैं देकर जाता हूं
मैं अविरामी समय, नही जाकर के फिर आता हू.

—०—

जिज्ञासा से परिचय पूछा— बोला मैं हूं काल
तुमने ही मेरे ललाट पर चिपकाए हैं बाल.

क्षण क्षण में खंडित कर मुझको काल जयी बनते हो
क्षण भोगी, क्षण भीरु, जिन्दगी क्षण भंगुर कहते हो

मैं अखंड हूं अविरल मेरी धारा बहती रहती
तेरे तन से मुक्त वास्तविक सत्ता मेरी रहती.

बालवर्ष की संज्ञा देकर बालबुद्धि दिखलाते
और खिलौने अल्प बुद्धि के दिला दिला बहकाते.

कभी बनाकर महिला मुझको सहानुभूति दरसाते
निर्वसना करते जाते हो दु:शासन लज्जाते

मुझे बना विकलांग मकर के आंसू ढरकाते हो
आत्मछली हो, खुद टूटे हो, मुझको खिसकाते हो.

बाल बुद्धि, नारी - दुर्बलता, भग्न मनुज को जानो
पहचानो खुद को पहले तुम, फिर मुझको पहचानो

यह अपूर्व उपहार तुम्हे अब मैं देकर जाता हू
मैं अविरामी समय, नही जाकर के फिर आता हूं.

—०—

तेरी अंगड़ाई में
उपायें भूल गया
तेरी परछाही मे
सध्यायें भूल गया
तेरे सपनों को उपाए रंगीन करें
मैं तो बिखरी
संध्याओं में ही जी लूंगा।

हर नई भोर
तेरे नयनो मे नित चमके
हर नई धूप
तेरे दामन मे नित दमके
हर रात पूर्णिमा, सदा दीप जल जाये
मैं तो तारों के
मूक रूदन मे जी लूंगा।

मेरी आशाएं
तेरा पार्यराज बने
शुभ आशसाएं
तेरा जीवन-साज बने
तुम नव वसन्त सा नव जीवन प्रारंभ करो
मैं तो पतझर के
क्रन्दन में ही जी लूंगा।

मिट्टी की उर्वरता
व्याकुल बुझ जाने को
नव समाज - सपनों के
बीज धरे पाने को
युवक निरंकुश तोड़ते पुरातन का।

जीवन के अनपथ पर
चिन्ताएं घूम रहीं
बुझी-बुझी आशाएं
कुंठाएं टोह रहीं
द्रौपदी समर्पित दुःशासन को।

हस्तहीन शिक्षाएं हैं
लक्ष्यहीन जीवन
अनियन्त्रित लोकतन्त्र
नयनहीन शासन
रोते हम फिर भी अनुशासन को

अपने ही फूलों पर रह पाते
अपने ही शूलों पर चल पाते
काश, सुख सधे होते
काश, दुख दबे होते।

नई भोर नया वर्ष देती है
हमसे कुछ नई शपथ लेती है
अपने आकाशों की सीमा को पहचानो
सतरंगी चाहों की पतंगों को फिर तानो
सागर के वादों-सा भ्रम टूटे
साफ सरल जीवन का क्रम टूटे
टीस फिर न पल पाये इस मन में
काश, ये हुए होते
काश, ये मिले होते।

दो
आओ,
हम सब पुराने साल को तह करके रख दें।
लेकिन ठहरिये,
जो सुख थे
उनकी उन्मत्तता में से प्रेरणा के बीज चुन लें
जो दुख थे
उनकी चुभन दफना दें।
वह व्याकुलता जो दुःख से उबरने को
नई राहें तलाशने को हैं
उसे सहेज लें
अब, पुराने साल को तह करके रख दें।

प्रेरणा के बीज बो जाने दें
मन का आकाश उन्हीं से सुहर जाने दें।

दें व

जो दूब की तरह रह-रह कर
पाँवों में घुस जाता था निकाल दें।
दूसरों को बौना बनाकर
अपनी विराटता के अहं के मोह को त्याग दें
ताकि

प्रेम की नगरी से अन

प्रेम की नगरी से अनजान
नफरत साथ लिये फिरता है
खुदगर्जी इंसान।

तन में चैन न मन मे सुख है
खुद से परायेपन का दुख है
किसके पीछे दौड रहा है
लक्ष्यो से बे मान ?

टूटा मन, टूटी आस्थाएं
नाप रही जीवन लिप्साएं
हर पीने की हसरत मे
खेल रहा ईमान।

कोलाहल में जन एकाकी
खाली प्याला और न साकी
[illegible] [illegible] के गंध बना है
[illegible] इंसान।

पत्थरों, हथगोलों के फूल बरसाये जा रहे हैं
आग से आरती उतारी जा रही है ।

भाव ऊंचे चढ चढ कर
अभावों के शख फूंक रहे हैं ।
नेताओं के नारे घण्टे बजा रहे हैं
और महान देश की महान भीड़
इन नारों की हरित क्रान्ति के लिये
उपवासी रहकर कीर्तन कर रही है ।

उत्सव के बाद
गणतन्त्र को शाम तक के लिये ऊंचा चढाकर
इस महान देश के, महान देशवासी
अपने अपने मे लौट जायेंगे
अगले उत्सव तक ।

—•—

ईर्ष्या से जलती हुई और
अपनी जेबों में गुप्त सनक भरती हुई भोग वृत्ति,
माया-मूल
जातिवाद के खंडित द्वीप, तथा
सर्व-धर्म समभाव वोटों की तलाश में
खूनी सिर्जा वाले आदमियों के जंगल में भटक रहा है
उसके होठों पर विजय है या पराजय
कौन जाने ?

कभी-कभी इस प्रांगण में
गांधी की लाठी की ठकठक
सुनाई पड़ती है,
किन्तु जब कान यथार्थ को परखते हैं
लगता है कि महान नेता का अभिनेता
विडम्बनापूर्ण ठिठोली कर रहा है
और जनता उसे सच मानकर
छलना का नेतृत्व स्वीकार लेती है.
मेरा देश कितना सरल और भोला है.
अब मैं सपनों को किन तन्तुओं से बुनूं ?
हर ताना - बाना बुनते समय टूट जाता है
गांठों से भरा सपनों का पट

देर गयी
अब भोर हुई, पर वही अंधेरे
वहीं है राहें वही लुटेरे ।

वही जगत है टूटा-फूटा
वही है पनघट रूठा-रूठा
वही पुरानी रज्जु अनेकों गांठों वाली
जिसको लाना धीरे-धीरे
वृत्त घिरे जीवन को ऊंचा
भरम मिटा तो मन साये हुए घनेरे ।

गगरी की माया तो बदली
धातु की काया उजली उजली
नये-नये वसनों में देखो
वही पुरानी है पनिहारी
चालें उलझी
मन है न्यारा
जीवन भर लाती हैं खारी
सरप बढ़ गये न्यून हुए हैं कुशल सपेरे !

—o—

लघु कवितायें

ग्रह
के पेड़
के पत्तों से हीन

। है
पत्तों के हम पर बसन्त है।

निशाचर
। के अधकार को
ने-ढकने के लिये
अंधकार को ओढ़े फिरता हूं
तु सूर्य अपनी असख्य रश्मि-उंगलियों से
कुरेद जाता है
लिये मुझे सूर्य से घृणा है।

संभावना
त के प्लेट पर रखा हुआ सूर्य
दि खा नहीं सकते
तो, कोई बात नहीं।
पहले प्लेट पर चांदनी को कुछ बूंदें रखो
उसे देखना सीखो
उसे चखना सीखो
चखता-चखता सूर्य भी रास आ जायेगा।

मन के साये हुए घनेरे

देख सखी
अब भोर हुई, पर वही अंधेरे
वही है राहें वही लुटेरे ।

वही जगत है टूटा-फूटा
वही है पनघट रूठा-रूठा
वही पुरानी रज्जु अनेकों गाठों वाली
जिसको लाना धीरे-धीरे
वृत्त घिरे जीवन को ऊंचा
भरम मिटा तो मन साये हुए घनेरे ।

गगरी की माया तो बदली
धातु की काया उजली उजली
नये-नये वसनों मे देखो
वही पुरानी है पनिहारी
बाले उलझी
मन है न्यारा
जीवन भर भाती हैं खारी
सरप बढ़ गये न्यून हुए हैं कुशल सवेरे !

देख सखी
अब भोर हुई, पर वही अधेरे
वही है राहे वही लुटेरे ।

वही जगत है टूटा-फूटा
वही है पनघट रूठा-रूठा
वही पुरानी रज्जु अनेको गाठों
जिसको लाना धीरे-धीरे
वृत्त घिरे जीवन को ऊ चा
भरम मिटा तो मन साये हुए घ

गगरी की माया तो बदली
धातु की काया उजली उजली
नये-नये वसनों मे देखो
वही पुरानी है पनिहारी
चाले उलझी
मन है न्यारा
जीवन भर लाती हैं खारो
सरप बढ़ गये न्यून हुए हैं कु

चतुष्पादया

अकर्मण्य के स्वप्न बिखर जाते हैं
कर्मण्यों के स्वप्न संवर जाते हैं
एक भाग्य पुस्तक पर सिर धुनता है
एक कर्म करघे पर सब बुनता है ।

ज़िन्दगी न तो स्वप्न है न मरीचिका
ज़िन्दगी न तो मात्र कवि की गीतिका
मनस में जो कुछ *निहित* है महानतम
जिन्दगी माध्यम इसी अभिव्यक्ति का

अपने को यदि कैद करोगे अपने में
जीवन का उजास बूढा हो जायेगा
यदि फैलाओगे खुद को हर आंगन तक
जीवन का मरूथल सावन हो जायेगा

हम सफर जिनको बनाया वे लुटेरे बन गये
प्यार जिन पर था लुटाया वे अनेरे बन गये
कौन सी पकडूं डगर कैसे कहां पर पग धरूं

शाश्वत कलम का विधान

आसमानी चादर की सलवटों में
छिपकर रहा होगा
पूर्णिमा का यह चांद
और शायद इसीलिये बच गया
राहु की
सर्वग्राही निगाहों से
या फिर प्रचलन ही कुछ और होगा
नभ मण्डल के देश का
क्योंकि
अपनी दुनिया में तो
राहु निगाहों को छल कर
पूर्णिमा तक विकसित हो जाना
किसी भी चांद के लिये
निषिद्ध है
शाश्वत कलम से लिखा हुआ
ऐसा ही विधान है

भुजाओं की शक्ति
तुम्हारा विश्वास तुमसे ले कर गये हैं ?
अब
वे शायद कभी नही लौटेंगे।
उभरते हुये सूरज तक तो
वे पहुच गये,
खोई हुयी रोशनी भी
उन्हे मिल गई
किन्तु
तुम्हारे उस शहर के वे निवासी
अंधेरे जहर के अभ्यासी
अब रोशनी को लूट रहे हैं
सूरज को तोड़ रहे हैं
और इस छीना झपटी में
एक दूसरे का सर फोड़ रहे हैं
अब वे कभी नही आयेंगे
और यदि आ भी गये
तो रोशनी नही लायेंगे

उठो !
एक बार फिर
इस अंधेरे ही मे चलें
राह शायद कुछ दीखे
आओ
एक बार फिर जलें

अन्धे और बहरे हाथों में
न्याय का तराजू है
हाथ निष्पक्ष हैं।
इन अंधी आंखों को
सोने की जगमग ही दीखती
खन खन ध्वनियां ही
सुनते हैं
ये बहरे कान
और तुम समझ रहे
बस्ती को
अपने को
सुरक्षित
घरों में बैठ कर असावधान ?

निन्दियाई आंखों को सपने दे
निर्भय तुम सो गये
पता भी न चला तुम्हे
रात के अंधेरे मे
कहां कहां
क्या से क्या हो गये।
सिर फिरे वक्त ने
व्यवस्था के पहरूओं से साजिश कर
खोल दिये दरवाजे
अस्पतालों जेलो और पागलखानों के।

पहचानो
ये चेहरे
अभी इसी क्षण पहचानो
त्याग
तपस्या
सत्य
और निष्ठा के
सब मोहक रंगों से रंगे हुये
ये श्रद्धा के पात्र बने
भोले से चेहरे
अपने आस पास का ढंग देखकर
रंग बदलने मे माहिर
रंगों के बाजीगर
गिरगिट के उस्ताद
मुखौटों के मायावी
कभी कभी ही तो—
अपने कमजोर क्षणो मे
समय और स्थितियो को
अनदेखा कर
रंगों और मुखौटों के नीचे वाले
अपने असली चेहरे मे आते हैं !
पहचानो
ये चेहरे
इसलिये, इसी क्षण पहचानो
पलकें झपकी नहीं, कि
इनकी शक्ल बदल जायेगी

कहते हैं
एक होता है अजगर
जिसके सम्मोहिनी जाल में पड़कर
निश्छल मृग शावक
भूल जाता है
हरे भरे दूब के मैदान
और मुंह में की अधखाई कोपलें;
उसे याद नहीं रहती हैं
धरती को नाप कर रख देने वाली
उसकी लम्बी चौकड़ी;
संकुचित हो जाते हैं
उसकी चेतना के क्षितिज,
और
पास ही विचरता वह मृग यूथ
कि जिसमें
अजस्र प्रवाहित वात्सल्य
बूंद बूंद अमृत
अपने स्तन पात्रों में भरे
व्याकुल है उसकी प्रतीक्षा में
वह विशाल वृक्ष
कि जिस पर
पक्षियों का कलरव बजाने के बाद

इसी क्षण

पहचानो
ये चेहरे
अभी इसी क्षण पहचानो
त्याग
तपस्या
सत्य
और निष्ठा के
सब मोहक रगों से रगे हुये
ये श्रद्धा के पात्र बने
भोले से चेहरे
अपने आस पास का ढग देखकर
रंग बदलने मे माहिर
रंगो के बाजीगर
गिरगिट के उस्ताद
मुखौटों के मायावी
कभी कभी ही तो—
अपने कमजोर क्षणो में
समय और स्थितियो को
अनदेखा कर
रंगो और मुखौटों के नीचे वाले
अपने असली चेहरे मे आते हैं !
पहचानो
ये चेहरे
इसलिये, इसी क्षण पहचानो
पलकें झपकी नही, कि
इनकी शक्ल बदल जायेगी

रहते हैं
एक होता है अजगर
जिसके सम्मोहिनी जाल में पड़कर
निश्छल मृग शावक
भूल जाता है
हरे भरे दूब के मैदान
और मुंह में की अधखाई कोंपलें,
उसे याद नहीं रहती हैं
धरती को नाप कर रख देने वाली
उसकी वामनी चौकड़ी;
संकुचित हो जाते हैं
उसकी चेतना के क्षितिज,
और
पास ही विचरता वह मृग यूथ
कि जिसमें
अजस्र प्रवाहित वात्सल्य
बून्द बून्द अमृत
अपने स्तन पात्रों में भरे
व्याकुल है उसकी प्रतीक्षा में
वह विशाल वृक्ष
कि जिस पर
पंछियों का कलरव बढ़ाने के हार

उदित हो रहे सूर्य की—
प्रथम किरण
अपने रेशमी हाथों से
उसकी पलकों को सहलाती थी
जिससे अठखेलियां करने के पश्चात्
भोर के पवन की
सिहरन भरी लहर
उसे गुद गुदाकर जगाती थी
और जब वह चौंक कर
अपनी सपनीली आंखें खोलता था
तो अपने समवयस्क मित्रों के बीच
रात के अंधेरे में उसकी सुरक्षा के प्रहरी
व्यूह मृगों के स्नेह मे
डूब डूब जाता था।
वह व्याकुल वात्सल्य,
वह विशाल वृक्ष,
सूर्य की वह प्रथम किरण,
सिहरन भरा डोलता वह पवन,
उसके वे सभी मित्र
और प्रहरी मृग
स ऽ ऽ ब——
उसकी चेतना की सीमाओं से
बाहर हो जाते हैं
और
अजगर की वह सम्मोहिनी
उसके और पास सिमटकर
उसके चारों ओर लिपटकर
दम घोंट देती है

ऐंठकर- अकड़ कर
अंग अंग छोड़ देती है
और तब
एक फैला हुआ मुंह
शनै - शनै
उस पर छा जाता है
तत्पश्चात्
जैसे किसी स्लेट पर
चाक से लिखे गये
चित्र या सवाल को
डस्टर लिये कोई हाथ
पोंछ कर
मिटा देता है ।

× × ×

कितने युग बीत गये
मनु पुत्र के मन - प्रदेश में
कुण्डली मार कर बैठा
एक अजगर
मानवीय भावनाओं के
निश्छल मृग छौनों को
अपने सम्मोहिनी जाल में बांध कर
निगलता जा रहा है
और जाने कब से
मुक्ति के लिए जूझता हुआ इन्सान
उसके दर्द से
छटपटा रहा है

—•—

सभ्य नहीं — मैं

आप कहते हैं
तो फिर ठीक ही कहते हैं श्रीमान
कि पूरी जिन्दगी
सभ्य लोगों के बीच रह कर भी
मैं
अभी तक सभ्य हो नही पाया ।
कठपुतलियों ही की बस्ती मे
पहली सांस लेने पर भी
इन्सान होने का बेमानी एहसास
अब तक मैं
खो नही पाया ।
सुबह से लेकर शाम तक
रास्तों की खाक छानने के बाद भी
मुझे नही आया रास्ते पर चलना ।
ठोकर - दर - ठोकर खा
ार बार गिरने पर भी
ुझे नही आया
ब तक भी सम्हलना ।
म्र का बड़ा भाग जी लेने पर भी
नहीं जान पाया
ा होता है तरीके से जीना ।

हाथ पैर बांधे
अंगुलियों के इशारों पर नाचती हुई
हर कठपुतली की आंखों में
एक बेबसी
एक टूटता हुआ स्वप्न
एक डूबता हुआ मस्तूल
और एक मिटता हुआ चित्र
मेरे एहसास पर
पूरी तरह छा जाता है,
और मुझे तब लगता है
कि नाचती हुई कठपुतली की बेबसी
मेरी ही बेबसी है
टूटता हुआ वह स्वप्न
मेरी ही आंखों ने देखा है
डूबता हुआ वह मस्तूल
मेरी ही उम्मीदों का जहाज है
और मिटता हुआ वह चित्र
मेरी ही कल्पना के 'कैनवास' पर बना है।
एक ज्वालामुखी सा फूट पड़ता है—
तब कहीं मेरे ही भीतर
और मैं उन रास्तों पर निकल पड़ता हूं
जहां हर कदम एक ठोकर
हर ठोकर एक घाव
हर घाव एक दर्द
हर दर्द एक मादक सिहरन
और हर मादक सिहरन

एक सलीब ...... ख़ून से नहाया हुआ

यह सलीब
जो सामने खड़ा है
मेरे प्यासे होंठ
इसे चूम लेना चाहते हैं
मेरा एक साथी
मेरा वह हमदम
जिसकी कंदियल सी जवानी
झुकी झुकी निगाहों मे
ख्वाबों के जाल बुनती थी
कभी नही टूटने वाली नींद में
यहीं पर सोया है

× × ×

एक दिन
सबने पीठ मोड़ली थी गोलियों की बौछार में
भाग गये थे सब कोई
चट्टान सा अड़ गया बस वही एक
तिरंगे को थामे हुये
और थोड़ी देर बाद
जब ज्वार उतर गया गोलियों की बौछार का
मेरे हमदम की भिंची हुई मुट्ठियों मे—
बंधे हुये तिरंगे को
जो उसके ख़ून मे नहाया था
फिर हम लोगो ने ऊंचा किया
शोख हवा में लहरा दिया
ऊंचे आसमान पर फहरा दिया
और गाने लगे गीत आजादी के
उसकी लाश पर

और
पास आता है
शत शत कठों से एक साथ फूटता गुरु घोष
"मजदूर किसानों की ललकार
खबरदार सरमायेदार
दुनिया के मजदूर– एक हो
इन.......कला ऽऽ ब– जिन्दा ऽऽ बाद......."
और बायी ओर के मोड़ से
लहराता हुआ बढ़ा आता है
एक लाल सा निशान,
निशान —
कि जिसे देख कर
महलों के माथे की सलवटें
और उभर आती हैं
भृकुटि तन जाती हैं अम्नो अमान के पहरेदारों की
उनके हाथ टटोलने लगते हैं कुन्दे बन्दूको के
दरवाजों पर तन जाती है सगीनें खुली हुई
और
मेरे सामने से
दहाड़ते हुये फौलादी इरादे
सुर्ख तिरंगों के साये में
बढ़ते हुए चले आते हैं
मेरे एहसास के ठहरे हुये पानी में
अनमोल यादों को बिखरा कर,
लहरें उत्पन्न कर
आन्दोलित करते हुये गुजर जाते हैं

एक निवेदन

प्रस्तुत कविता संग्रह **'चौराहे से आगे'** और इसके कवियों के बारे में मुझे खास कुछ नहीं कहना है। कहते हैं कि कवि का परिचय तो उसकी कवितायें ही होती हैं और उन्हें आपने इस संग्रह में पढ़ा है।

किसी भी रचना का पाठक से बढ़कर अधिकृत और कोई निर्णायक नहीं हुआ करता है। इस संग्रह की कविताओं के बारे में तो आपका निर्णय ही मान्य है फिर भी आपकी प्रतिक्रिया से वाकिफ होने की हमारी ख्वाहिश स्वाभाविक है ही।

कवितायें पढ़ने के बाद अब एक हद तक तो आप कवियों से भी अपरिचित नहीं रहे हैं।

श्री मदन याज्ञिक की कविताओं ने आपको यह अनुमान दे दिया होगा कि वे शिक्षक हैं। शिक्षा देने का स्वर उनकी कविताओं में बराबर मुखरित रहता है। वे श्रीराम उच्च माध्यमिक विद्यालय, बगड़ के प्राचार्य हैं।

श्री राम अवतार की रचनाओं से आपको अन्दाज हुआ होगा कि अपने आस-पास के परिवेश से हटकर उनकी दृष्टि राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों पर भी बराबर रखती रहती है। शान्ति और विश्व-शान्ति के लिये अपने में वे कविताओं को भी हथियार की तरह काम में लेते हैं। आजकल वे भारत सोवियत सांस्कृतिक संघ के राजस्थान में जनरल सेक्रेट्री हैं।

श्री राधा वल्लभ 'परेश' की कविताओं से आपको पता होगा कि मध्यमवर्गीय चेतना से उभर कर एक ईमानदार व्यक्ति लगातार परिश्रम से अपनी राह पहचान रहा है। 'परेश' आजकल श्रीराम उच्चमाध्यमिक विद्यालय, बगड़ में व्याख्याता हैं।

और श्री [illegible] 'आनन्द' की कविताओं से आपकी मरु की मिट्टी की सौंधी महक को तो आपने महसूस किया ही होगा। वे भी आजकल बगड़ ही में शिक्षक हैं। [illegible] है कि वह [illegible] करके भी इससे दूर होने का कोई [illegible] है।

[प्रकाशक]

मैं तो चन्द बातें इस प्रकाशन के बारे में अर्ज करना चाहता हूं ।

व्यावसायिकता ने साहित्य सृजन और प्रकाशन—दोनों ही को इस
प्रभावित कर लिया है कि सभी प्रतिबद्धताओं को तिलांजलि देकर आज ले
और प्रकाशन भी लगभग व्यवसाय बन गया है । यह स्थिति है जिस पर
प्रबुद्ध क्षेत्रों में बार-बार चर्चायें होती हैं । इसका मुकाबला करने में अनेक स
असफल कोशिशें भी की जा रही हैं । झुंझुनू जिला प्रगतिशील लेखक स
लेखक साथियों ने भी एक प्रयास किया है । 'चौराहे से आगे' इस गैरपे
लेखक साथियों के इस प्रयास ही की शुरुआत है जिसे आपकी मदद से और
लेजाने की हम उम्मीद करते हैं ।

मैं उनकी बात नहीं करता हूं जो इन्सान की जिन्दगी के हर पहलू
नफे-नुकसान के ताने-बाने में ही बान्धे रखते हैं । वे तो इन्सान की हर आ
को एक जिन्स बनाकर बाजार में लाया करते हैं । मैं तो आपके सहयोग
अपेक्षा करता हूं जो इस बाजार के कारकुन बनने को तो विवश हो गये,
इस बाजार का संचालन करने वाले नहीं हैं ।

यह प्रकाशन कतई व्यावसायिक नहीं है—बल्कि व्यावसायिकता
खिलाफ लेखकों का सामूहिक और सहकारी प्रयास है और एक निश्चित यो
के अन्तर्गत किये गये इस प्रकाशन की रायल्टी की राशि लेखक लेते नहीं हैं—
योजना को आगे ले जाने के लिए दे देते हैं ।

व्यावसायिक दक्षता की कमी—खास तौर पर छपाई के मामले
आपकी नजर में आई होगी । अगला प्रकाशन इससे बेहतर बने, इसकी को
का मैं आपको यकीन दिलाना चाहता हूं । एक बार फिर आपके सहयोग
अपेक्षा के साथ,

भवदीय

सुरेन्द्र झुंझनवी

संयोजक, झुंझुनू जिला प्रगतिशील लेखक